अध्याय षष्ठम्

उपसंहार

भारतीय संस्कृति अत्यन्त प्राचीन काल से अनेकानेक सांस्कृतिक समूहों में विभक्त थी। विभक्तता विविध विविधताओं के कारण थी। पूर्वमध्यकाल में भारत के भिन्न–भिन्न क्षेत्रों में एक अथवा एकाधिक कारणों ने विभिन्न सांस्कृतिक समूहों में कुछ विशिष्ट प्रवृत्तियों को अंकुरित किया, यथा–अधिकांश सांस्कृतिक समूहों में कर्मकाण्डों का बाहुल्य हो गया, अंधविश्वासों के प्रभाव संख्या में वृद्धि हुई, पर्दा प्रथा, सती प्रथा, विवाह प्रथा, बालविवाह, छुआ–छूत सदृश सामाजिक कुरीतियों की जड़ें गहराई तक धँसती गयी, आस्तिकवादी प्रवृत्ति की पैठ गहनतर होती गयी, अहिंसा की प्रवृत्ति की आवश्यकता को मान्यता प्राप्त हुई, सामाजिक संस्तरण के विभेद गहरे होते गये, एवं बहुदेववाद, अवतारवाद, तंत्रवाद तथा अनैतिक आचार आदि प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिला। इन मूलभूत आन्तरिक समानताओं के कारण विभिन्न सांस्कृतिक समूह स्थल विशेषताओं की दृष्टि से सर्वथा एक समान हो गये। इसके परिणामस्वरूप एक ऐसी राष्ट्रीय संस्कृति का स्वरूप सृजित हुआ जिसमें किसी सांस्कृतिक समूह को प्रत्यक्षतः आहत किये बिना सभी को अपने कलेवर में समेटकर विकसित होने की क्षमता थी।

पूर्वमध्यकाल में सृजित भारत की इस राष्ट्रीय संस्कृति के विविध पक्ष इस काल के राष्ट्रकूट वंश एवं वणिक वर्ग के सहयोग से निर्मित एलोरा की गुफाओं में अपने यथार्थ रूप

में शिल्पांकित किये गये थे। इन गुफाओं के गहन अनुशीलन से तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक, कलात्मक आदि सांस्कृतिक पक्षों के विकास की यथार्थ स्थिति से सहज ही साक्षात्कार किया जा सकता है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में हमने एलोरा की शिव प्रतिमाओं के स्वरूपगत विकास को स्थानीय विकास तथा परिवर्तन की दृष्टि से समझाने का प्रयास किया है।

७४७ ई० में चालुक्य शासक विक्रमादित्य द्वितीय की मृत्यु के बाद जब दन्तिदुर्ग द्वारा राष्ट्रकूट राजवंश की स्वतन्त्रता की घोषणा की गयी, और महाराष्ट्र पर अधिकार कर लिया गया तभी से एलोरा राष्ट्रकूट शक्ति का केन्द्र बना। दन्तिदुर्ग के दो अभिलेख एलोरा से मिले हैं एवं उसने अपने युग के श्रेष्ठतम दशावतार गुफा मन्दिर (गुफा संख्या–१५) का निर्माण भी एलोरा में कराया, अतः एलोरा को ही अधिकांश विद्वान उसकी राजधानी मानते हैं। इसके बाद इस वंश के गोविन्द तृतीय के काल तक एलोरा राजधानी बनी रही। कृष्णराज प्रथम ने एलोरा में विश्व को आश्चर्यचकित कर देने वाले कैलास गुफा मन्दिर (गुफा संख्या–१६) का निर्माण कराया। सम्भव है इन शासकों द्वारा गुफा मन्दिरों का निर्माण कराकर एलोरा को गुफा तीर्थ बना देने के उपरान्त यह क्षेत्र कलाकारों को अपनी कला का अभिव्यक्ति का श्रेष्ठ स्थल प्रतीत हुआ हो, और उन्होंने यहाँ सतत् रूप से शिल्पकर्म जारी रखा हो। दूसरी तरफ पूर्वजों की राजधानी होने के कारण राष्ट्रकूटों ने एलोरा में निर्माणाधीन गुफाओं के निर्माण कार्य में संलग्न कलाकारों की आजीविका का प्रबन्ध करके निर्माण में सहयोग प्रदान किया होगा। इसी के परिणामस्वरूप इन दिव्य गुफाओं का निर्माण कार्य सम्पन्न हुआ होगा।

एलोरा की गुफाओं के मूर्ति शिल्प की विषय–वस्तु समकालीन पूर्व मध्यकालीन कला एवं सांस्कृतिक परिवेश से पूर्णतः आबद्ध थी। यह ऐसा काल था, जबकि दक्षिण भारत में ब्राह्मण, बौद्ध एवं जैन धर्मों का प्रचार–प्रसार एवं प्रभाव लगभग एक जैसा हो गया था, जिसे इनमें आपसी प्रतिद्वन्दिता प्रारम्भ हो गयी थी। शैव नयनार संत, 'सम्बन्दर' ने अपने प्रत्येक 'पदिगम' में जैनों की निन्दा की है। अनेकानेक किंवदन्तियों से भी ज्ञात होता है कि सन्त सम्बन्दर ने आजीवन जैन धर्मावलम्बियों से सक्रिय संघर्ष किया था। इसी प्रकार

एक अन्य शैव नयनार सन्त 'अय्यर' के विषय में ज्ञात होता है कि वे प्रारम्भ में जैन धर्मानुयायी थे, किन्तु बाद में जैन सिद्धान्तों को पतनोन्मुख मानने लगे थे। इन दोनों सन्तों ने दक्षिण में जैन धर्म को ह्रासोन्मुख करने में महत्वपूर्ण योगदान किया था। जो कार्य अय्यर और सम्बन्दर ने जैनों के विरूद्ध किया 'मणिकवासागर' नामक शैव नयनार संत ने वही कार्य बौद्धों के सर्वाधिक प्रबुद्ध सिंहल विद्वानों को शास्त्रार्थ में पूर्णतः पराजित कर दिया था। पेरिय पुराण में ६३ नयनारों का जीवन चरित्र वर्णित है जो अन्य धर्मानुयायियों से वाद–विवाद करते रहते थे। वैष्णव धर्म के सन्तों को दक्षिण भारत में 'अलवार' कहा जाता था। 'अलवार' संतों में भी कुछ ऐसे थे जिनमें साम्प्रदायिकता का आवेश अधिक था, और जो खुले आम अन्य धर्मों की आलोचना किया करते थे। उदाहरणार्थ तिरूमंलिराई अलवार संत शैव धम्र का प्रबल विरोधी था। आचार्य शंकर (लगभग ७८८–८२० ई०) ने वेदान्त दर्शन के प्रचार–प्रसार हेतु सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया, और आध्यात्मिक विजय की। इन्हीं परिस्थितियों में दक्षिण भारत से बौद्ध एवं जैन धर्म के पैर उखड़ गये, वस्तुतः वैष्णव अलवारों एवं शैव नयनारों के पुनर्जागरण आन्दोलन का सामना ये निवृत्तिपरक ध र्म नहीं कर सके।

स्पष्ट है कि जिस समय एलोरा में गुफा–मन्दिरों का निर्माण हो रहा था सम्पूर्ण दक्षिण भारत साम्प्रदायिक विद्वेष की आँधी को झेल रहा था। समाज में व्याप्त धार्मिक विद्वेष को प्रतिरोधित एवं निष्क्रिय करने के लिये एलोरा की अधीश्वरी राष्ट्रकूट शक्ति ने धार्मिक सहिष्णुता की नीति को अपनाया।

प्रायः मन्दिरों का निर्माण शासकों के संरक्षकत्व में ही होता है। राष्ट्रकूट युग के कई मंदिरों के आधार पर तत्कालीन धार्मिक समन्वय की प्रवृत्ति के साक्ष्य प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

उदाहरणार्थ –

१. सलोत्मी के एक मन्दिर में ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश तीनों देवताओं की पूजा होती थी।

२. करमाद्रि के एक मन्दिर में विष्णु, शंकर और भाष्कर की सम्मिलित पूजा होती थी।

३. एलोरा की गुफाओं को यदि देखा जाये तो साम्प्रदायिक समन्वय की भावना का इतना निखरा स्वरूप दृष्टिगत होता है कि ऐसा लगता है जैसे विभिन्न सम्प्रदायों के देवी–देवता किसी एक सम्प्रदाय में स्व को परिगणित कराने के लिए स्वतः उत्सुक हो गये हो।

शासकों द्वारा धार्मिक समन्वय के लिये जो प्रयास किये जा रहे थे उनका जनता पर यथेष्ट प्रभाव भी पड़ रहा था, इसका हमें कम–से–कम एक स्पष्ट साक्ष्य उपलब्ध है। हिन्दू समाज में सर्वाधिक कट्टर ब्राह्मण वर्ण होता है किन्तु राष्ट्रयुगीन बल्लाल वंशीय ब्राह्मणों ने जैन मठ को दान दिया था, इसके स्पष्ट साक्ष्य प्राप्त होते हैं।

स्पष्ट है कि समाज में साम्प्रदायिक विद्वेष की जो भावना व्याप्त थी उसे दबाने के लिये राष्ट्रकूटों ने धार्मिक सहिष्णुता की नीति का अवलम्बन लिया था। इस नीति के तहत ही एलोरा में निर्माणाधीन गुफा मंदिरों के निर्माण में संलग्न कलाकारों की आजीविका का प्रबन्ध राष्ट्रकूट शासकों ने किया। एलोरा की ब्राह्मण गुफाओं की मूर्तियों में अत्यधिक शक्ति एवं असीमित स्फूर्ति है। आकृतियों में देवता मानव की अपेक्षा अधिक अलौकिक लगते हैं, और इस विशेषता को उनके सिर एवं हाथों की संख्या को बढ़ाकर भी प्रकट किया गया है। एलोरा लयण मूर्तियों के निर्माता स्मार्त समप्रदाय के शैव थे। इसी कारण एलोरा की ब्राह्मण गुफाओं में शैव के साथ–ही–साथ वैष्णव, शाक्त एवं अन्य देवी–देवताओं का भी अंकन हुआ है।

एलोरा की मूर्तियों में पूर्ववर्ती चालुक्य एवं पल्लव शैली का स्पष्ट प्रभाव मिलता है। प्रारम्भिक मूर्तियाँ चालुक्य प्रभाव में बनीं। यहाँ की आकृतियाँ बलिष्ठ और अतिकाय हैं; फिर भी आंगिक विन्यास में सन्तुलन बनाये रखने की कोशिश की गयी है। कुछ रुक्ष मूर्तियों को छोड़कर अन्य में शारीरिक विन्यास की दृष्टि से पूर्णता और ऊर्जा को अभिव्यक्त करने की सफल चेष्टा की गयी है। आकृतियाँ प्रायः अपनी शारीरिक स्थिति के कारण स्वतन्त्र सी दिखती हैं। किन्तु कहीं–कहीं स्थान के अभाव में स्थापत्य गत स्थिति अथवा एक सीमित ढाँचे में निबद्ध सी भी लगती है। आगे चलकर स्वतन्त्र राष्ट्रकूट शैली

के अन्तर्गत अत्यन्त विशाल आकार वाली मूर्तियाँ बनीं। इनमें भावपक्ष की प्रधानता और अलंकरण तथा प्रतिमाशास्त्रीय विशेषताओं की प्रमुखता थी। मांसल मूर्तियाँ सन्तुलित शारीरिक गठन वाली तथा आध्यात्मिक शक्ति को विभिन्न भावों से व्यक्त करने वाली हैं। रूप और भाव का समन्वय जो गुप्तकाल की मूर्तियों में प्रारम्भ हुआ, उसका निर्वाह एलोरा की कतिपय मूर्तियों में भी किया गया है। उत्तर और दक्षिण, दोनों के मिश्रण से उद्‌भूत चालुक्य और राष्ट्रकूट कला में एक अलौकिक सौन्दर्य का समन्वय था जिसे एलोरा में मूर्त रूप में देखा जा सकता है।

एलोरा की गुफाएँ और मूर्तियाँ स्थापत्य तथा शिल्प की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यहाँ पर छठीं से तेरहवीं शताब्दी ई० तक के वास्तु एवं शिल्प देखने को मिलते हैं। जिनको उजागर करने में चालुक्य; राष्ट्रकूट एवं देवगिरि के यादवों का विशेष सहयोग रहा। जिसके फलस्वरूप एलोरा में बौद्ध विहार एवं चैत्य तथा ब्राह्मण मन्दिरों तथा जैन गुफाओं का निर्माण बड़े सुचारु एवं सुनियोजित ढंग से किया गया।

ब्राह्मण धर्म में त्रिदेवों (ब्रह्मा, विष्णु, शिव) की कल्पना अति प्राचीन है, जो प्रारम्भ में त्रिधा के रूप में सूर्य के ही तीन रूप थे, किन्तु पुराणों के समय तक यह धारण ब्राह्मण धर्म के तीन प्रमुख देवताओं – ब्रह्मा, विष्णु और शिव के रूप में परिणत हुई। इन देवताओं को क्रमशः सृष्टि के तीन प्रमुख कार्यों – रचना, पालन और संहार से सम्बद्ध बताया गया है। त्रिदेवों में विष्णु और शिव निःसन्देह ब्रह्मा की अपेक्षा अधिक लोकप्रिय थे। शिव को मुख्यतः सृष्टि के संहार–कार्य से सम्बद्ध किया गया है। किन्तु कुछ शैव पुराणों में शिव को संहार के साथ ही सृष्टि की रचना और पालन करने वाला भी बताया गया है। शिव को पशुपति, भूतनाथ, माहेश्वर, विश्वनाथ, शंकर, कालारि, महादेव, त्रिपुरारि तथा अन्य अनेक नामों से सम्बोधित किया गया है।

एलोरा में शिल्प एवं मूर्ति लक्षण का पूरा निखार और उत्कृष्टता यहाँ की शैव मूर्तियों में व्यक्त हुई हैं। यहाँ शिल्प–परम्परा की अनुभूति और कर्म–कौशल देवाधिदेव शिव की ऊर्जा और शिवत्व भाव को अभिव्यक्त करने में पूरी तरह सक्षम रहे हैं। शिव के रौद्र रूप

को एलोरा के शिल्पी ने पूरी दक्षता के साथ प्रदर्शित किया है। शिव के उग्र रूप का यथार्थ चित्रण यहाँ की भैरव प्रतिमाओं में हुआ है तथा इसी प्रकार चित्रण शिव के अन्य संहारक स्वरूपों (त्रिपुरान्तक, अन्धकासुर–वध) में भी मिलता है। दशावतार गुफा की भैरव मूर्ति साक्षात् क्रोध की मूर्ति प्रतीत होती है। एलोरा के शिल्पी ने शिव को एक विराट् परिवेश में देखा और उनकी तीन शक्तियों – रचना, पालन और संहार को अत्यन्त मर्यादित और गौरवपूर्ण दृष्टि से उनके विविध स्वरूपों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। अन्य ब्राह्मण देव प्रतिमाओं की तुलना में एलोरा में शिव की प्रतिमाएं अधिक हैं। उनमें सर्वाधिक स्वरूपगत विविधता भी दृष्टिगत होती है। शिव के अनुग्रह–स्वरूपों में रावणानुग्रह (गुफा २६, २१, १४, १५, १६), किरातानुग्रह तथा रावण के सिरदान स्वरूपों की सर्वाधिक प्रतिमाएँ हैं। रावणानुग्रह स्वरूप की प्रतिमाओं में रावण सदैव पंचमुख और ८, १० या २० हाथों वाला दिखाया गया है। गुफा संख्या १५ एवं १६ में रावणानुग्रह प्रतिमा उत्तर–दिशा में बनी है जो शिव–पार्वती सहित कैलास पर्वत पर विराजमान शिव के रावणानुग्रह–स्वरूप की चार मूर्तियाँ उत्कीर्ण है। कैलास मन्दिर के एक उदाहरण में खड्ग भी दिखलाया गया है जो कथा की सम्पूर्णता व्यक्त करता है। ज्ञातव्य है कि बेलूर (कर्नाटक के चेन्नकेशव स्वामी मन्दिर, होयसल) की रावणानुग्रह–प्रतिमा में भी खड्ग प्रदर्शित है। कैलास मन्दिर के दक्षिणी मण्डप को रावणानुग्रह–मूर्ति भाव सम्प्रेषण की क्षमता के कारण भारतीय मूर्तिकला का निःसन्देह एक उत्कृष्ट उदाहरण है। रावणानुग्रह स्वरूप की इतनी सुन्दर और सशक्त अभिव्यक्ति अन्यत्र नहीं हुई है। शिव का सौम्य, शान्त और अविचलित स्वरूप तथा पार्वती का पर्वत के हिलने से विचलित हो उठना और शिव के समीप सिमट आना तथा पार्श्ववर्ती आकृतियों का पर्वत के हिलने से सशंकित हो उठना और सहजभाव से शिव द्वारा रावण की सम्पूर्ण शक्ति को निष्फल कर देना इस प्रतिमा की विशेषताएँ हैं। गुफा संख्या २१ (रामेश्वर) की रावणानुग्रह प्रतिमा में रावण के मध्यमुख के ऊपर गर्दभ मुख का अंकन भी महत्वपूर्ण है।

शिव के मुख्यतः संहारक देवता होने के कारण उनकी उग्र या संहार स्वरूपों की एलोरा में अधिक मूर्तियां बनीं। इनमें त्रिपुरान्तक, अन्धकासुर तथा गजासुर–संहार स्वरूपों

एवं वीरभद्र की मूर्तियाँ मुख्य हैं। शिव के सौम्य या शान्त स्वरूपों में एलोरा में कल्याण–सुन्दर, गंगाधर, महेश, लकुलीश, लिंगोद्भव, दक्षिणामूर्ति, और नटराज की मूर्तियाँ मुख्य हैं। त्रिपुरान्तक प्रतिमा (गुफा १६) में शर–सन्धन की मुद्रा में शिव का निरूपण अत्यन्त क्रियाशील रूप में हुआ है। अन्धकासुरवध मूर्ति में सिर के ऊपर उत्तर और दक्षिण भारत की प्रतिमाओं के समान ही गजचर्म का प्रदर्शित किया जाना अन्य क्षेत्रों में नृत्य की गतिशीलता तथा लयात्मकता पूरी तरह व्यक्त है। ये प्रतिमाएँ विवरण की दृष्टि से बादामी और एलिफेण्टा की नटराज प्रतिमाओं से तुलनीय हैं। इनमें गणेश भृंगी ऋषि, नन्दी तथा पार्वती आदि को भी शिव–नृत्य का अवलोकन करते हुए दिखाया गया है। कुछ उदाहरणों में कल्याण सुन्दर प्रतिमा का कथात्मक अंकन हुआ है। इनमें पहले ब्रह्मा द्वारा पार्वती के पिता हिमवान से पार्वती के विवाह के प्रसंग में वार्ता, तत्पश्चात् शिव–पार्वती के पाणिग्रहण (गुफा संख्या २१, २६) और विवाह के पश्चात् शिव–पार्वती को क्रीड़ा–भाव में आसीन दिखलाया गया है। ऐसा अंकन सामान्यतः अन्यत्र नहीं प्राप्त होता। गुफा संख्या २१ (रामेश्वर) की कल्याण सुन्दर प्रतिमा में शिव–पार्वती के मध्य उनके पुत्र गणेश का अंकन खटकने वाली बात है। कैलास मन्दिर की कल्याण सुन्दर प्रतिमा में पार्वती को शिव के वाम पार्श्व में भी दिखलाया गया है जो परम्परा विरुद्ध है।

गंगाधर प्रतिमा (गुफा संख्या १५, १६) का भी कथात्मक अंकन हुआ। इनमें गंगा के शिव की जटा से मुक्त होकर पृथ्वी की ओर आगमन तथा नीचे की ओर पार्वती, भगीरथ एवं सागर–पुत्रों के अंकन के माध्यम से कथात्मक रूप दिया गया है। महेश मूर्तियाँ यद्यपि विवरण की दृष्टि से एलिफेण्टा की महेश मूर्ति के समान है, किन्तु कलात्मक स्तर पर ये मूर्तियाँ एलिफेण्टा के समकक्ष नहीं ठहरती। लिंगोद्भव प्रतिमाओं (गुफा संख्या १६) में अग्निस्तम्भ से निकले शिव के समीप ब्रह्मा और विष्णु की आकृतियाँ नमस्कार मुद्रा में निरूपित हैं जो ब्राह्मण धर्म के दो प्रमुख देवताओं द्वारा शिव को श्रेष्ठता की स्वीकृति का सुन्दर अंकन है।

इस प्रकार एलोरा में न शिव के विविध स्वरूपों द्वारा; अपितु मूर्तियों के परिकर में ब्रह्मा, विष्णु एवं देवी–देवताओं के अंकन द्वारा भी शिव की श्रेष्ठता को उजागर किया गया

है। यह भाव एलिफेण्टा की शिव मूर्तियों में अधिक सुन्दर है।

प्रतिमा विज्ञान की दृष्टि से एलोरा की शिव प्रतिमाएं मुख्य आयुधों, वाहनों तथा अन्य लक्षणों की दृष्टि से शास्त्रीय ग्रन्थों के निर्देशों का पालन करती हैं। शिव विभिन्न स्वरूपों में २ से १० हाथों वाले हैं, किन्तु चतुर्भुज और अष्टभुज स्वरूप ही सर्वाधिक लोकप्रिय था। विभिन्न कथात्मक स्वरूपों के निरूपण में कलाकार ने कथा के उस अंश को प्रतिमाओं में अभिव्यक्त किया है जो घटना या कथा की पूर्णता का भाव व्यक्त करता है। सभी स्वरूपों में शिव जटा मुकुट तथा अन्य पारम्परिक आभूषणों (नागतलय, मृगचर्म) वृषभ वाहन तथा करों में परशु त्रिशूल (या शूल), डमरू, सर्प अभया या वरदमुद्रा से युक्त हैं।

एलोरा की शिव प्रतिमाओं के निरूपण में उत्तर भारत (वृहत्संहिता, शिव पुराण, विष्णुधर्मोत्तर पुराण, मत्स्य पुराण) के साथ ही दक्षिण भारतीय प्रतिमाशास्त्रीय (मानसार, अंशुमद्भेदागम्, अपराजित वृच्छा, कामिकागम, मयभत) परम्परा का भी प्रभाव रहा है। एलोरा की भौगोलिक स्थिति के कारण वहाँ के वास्तु एवं प्रतिमाओं पर दक्षिण भारतीय परम्परा का प्रभाव अधिक रहा है। एलोरा के कैलास मन्दिर पर पट्टडकल के विरुपाक्ष मन्दिर का प्रभाव स्पष्ट है। इसी प्रकार प्रतिमाओं में रावणानुग्रह, रावण–जटायु युद्ध तथा नटराज एवं अन्य कई मूर्त स्वरूप स्पष्टतः महाबलीपुरम, पट्टडकल, बादामी, भुवनेश्वर, काँचीपुरम्, एलिफेण्टा की पूर्ववर्ती और समकालीन मूर्ति–परम्परा से प्रभावित है। कथात्मक अंकन में कथा के मूल भाव का प्रसंग को पकड़ने की चेष्टा की गयी और उसका सूक्ष्मता से अंकन किया गया है।

एलोरा की शिव मूर्तियों के साथ–ही–साथ अन्य देवमूर्तियाँ वस्तुतः पूर्ण विकसित शिल्प शास्त्रीय परम्परा के पूर्व की हैं। अतः उनके निरूपण में पौराणिक कथाओं का आधार अधिक प्रभावी रहा है। साथ ही एलोरा की ब्राह्मण धर्म से सम्बन्धित गुफाओं में विभिन्न ब्राह्मण धर्मों के देव–देवियों के स्वरूप को सम्प्रदायवाद के अवगुंठन से बाहर रखकर आलिंगनबद्ध स्वरूप में शिल्पांकित किया गया है। जिसमें शिव की प्रतिमाशास्त्रीय स्वरूप इसकी विलक्षणता का द्योतक है।

इस प्रकार एलोरा कला एक ऐसे मंच का निर्माण करती है जिस पर तत्कालीन समन्वयवादी भावना का मंचन होता है। समन्वयवाद का यह मंचन भारतीय कला एवं संस्कृति की आत्मा के निराकार स्वरूप को साकार रूप में प्रस्तुत कर देता है।